नित्यहवनपद्धति
खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई
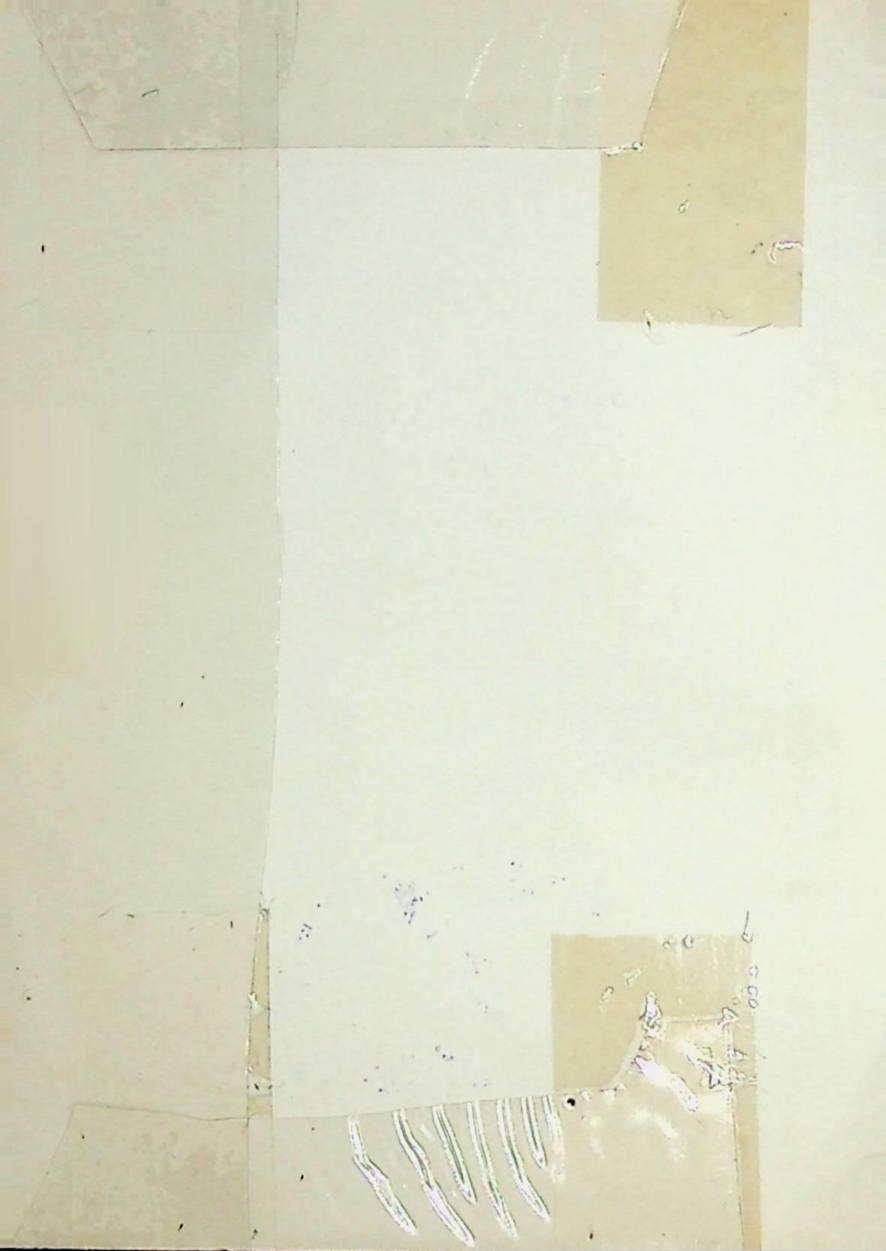
॥ श्रीः ॥

नित्यहवनपद्धति ।

भाषाटीकासमेत ।

संग्रहकर्त्ता–सोहनलाल गोयलीय.
वल्लभगढ, जि० गुरगावां

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
मालिक–" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्–प्रेस,
कल्याण–बंबई.
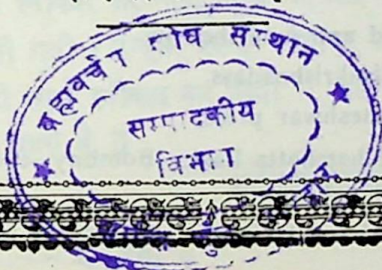
समर्पणपत्र

हिन्दूजातिके स्तम्भ तथा श्रीभारतधर्ममहामण्डलके प्रसिद्ध वक्ता परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री१०८स्वामीदयानन्दजी सरस्वतीके करकमलोंमें यह ' नित्यहवनपद्धति ' सादर समर्पित है ।

समर्पणकर्त्ता—सोहनलाल गोयलीय ।

धन्यवादपत्र ।

" वैदिके लौकिके वापि नित्यं हुत्वा ह्यतन्द्रितः ।
वैदिके स्वर्गमाप्नोति लौकिके हन्ति किल्बिषम् ॥ "

(लिखितस्मृति)

इस पद्धतिके संग्रह करनेमें प्राचीन ग्रन्थोंके अतिरिक्त इटावाके स्वर्गवासी पं. भीमसेनजी वेदाचार्यके ग्रन्थोंसे भी सहायता मिली है । इस कारण उनका धन्यवाद किया जाता है । इस पद्धतिमें अधिक मन्त्रोंका अर्थ मुरादाबादनिवासी स्वर्गवासी पं. ज्वालाप्रसाद मिश्र विद्या-वारिधिके यजुर्वेदभाष्य तथा और २ ग्रन्थोंसे लियागया है । इस कारण उनकाभी धन्यवाद किया जाता है जब यह पद्धति तैयार हो गयी तब इसके समर्पणके स्वीकार करलेनेके वास्ते यह श्रद्धेय स्वामी दयानन्द-जीके पास भेजी गयी । उन्होंने इसको देखकर ठीक बताया और इसके समर्पणको सहर्ष स्वीकार कर लिया । इस कारण उनका भी धन्यवाद किया जाता है ॥

सोहनलाल गोयलीय ।

ॐ

(१) प्रस्तावना

धर्मशास्त्रोंमें लिखा है कि, (२) " आलसको छोडके सायं प्रातः-काल नित्य २ हवन करे " और (३) " जो नित्य नियमसे जप होम करता है वह इस लोक परलोकमें कहीं भी अधोगतिको प्राप्त नहीं होता । " परन्तु अति खेदकी बात है कि, इस समय एक भी प्राचीन नित्यहवनपद्धति देखनेमें नहीं आती है, जिसके अनुसार प्रत्येक द्विजाति हवन कर सके । इस कमीको देखकर हमारा बहुत दिनोंसे विचार था कि, एक सर्वाङ्गसुन्दर और सप्रमाण नित्यहवनपद्धति संग्रह करके प्रकाशित करायी जावे। परन्तु और २ बातोंमें फँसे रहनेके कारण हम इस कामको न कर सके और एक प्रकारसे इधरकी तर-फसे ध्यानसा ही हट गया । परन्तु उस लीलाधामकी भी अद्भुत लीला है । जिस कामको करना हम एक प्रकारसे भूलसे गये थे उसके करनेका फिर संकल्प उठा और अबके ऐसा उठा कि जबतक हमने इस कामको पूरा न कर लिया तबतक चैन ही नहीं पडा । अब हम अपने पाठकोंके सामने इस **नित्यहवनपद्धति**को उपस्थित करते हुए प्रार्थना करते हैं कि इसको अपनाया जावेगा । इस पद्धतिमें चार अध्याय रखे हैं । जिनका संक्षेप विवरण यह है । **१–आवश्यक-**

---

(१) विधिर्यथैव संकल्पो मुखतां प्रतिपद्यते । प्रधानस्य प्रबन्धस्य तथा प्रस्तावना मता ॥ (साहित्यदर्पण) (२) सायंप्रातश्च जुहुयात् सर्वकालमतन्द्रितः ॥ (हारीतस्मृति) । (३) जपतां जुह्वतां चैव विनिपातो न विद्यते ॥ (मनुस्मृति)

सूचनाध्याय—इसमें प्रमाण देकर यह दिखलाया है कि, हवन कब और किनको करना चाहिये तथा वे सूचनायें दी गयी हैं जिनका ध्यानमें रखना अति आवश्यक है। **२—पात्रादिलक्षणकथनअध्याय**—इसमें हवनसम्बन्धी पात्रों तथा पदार्थोंके प्रमाण देकर लक्षण लिखे गये हैं । **३—आहुतिआदिनिर्णयअध्याय**—इसमें हवनसम्बन्धी उन आहुतियों तथा कृत्यादिकोंका प्रमाण देकर निर्णय किया गया है जिनका इसमें रहना अतिआवश्यक है । **४—नित्यहवनपद्धतिनिरूपण-अध्याय**—इसके दो भाग रखे हैं। यथा (अ) **पूर्वभाग**—इसमें प्रमाण देकर वह कृत्य लिखे गये हैं जो आहुतियोंसे प्रथम किये जाते हैं। (आ) उत्तर भाग—इसमें वे आहुतियां विधिसहित प्रमाण देकर लिखी गयी हैं जो नित्यहवनमें दी जाती हैं । शास्त्रोंमें लिखा है कि (१) " किसी मन्त्रके ऋषि छन्द देवता और विनियोगको जाने विना जो (उसकी) शिक्षा अथवा जप करता है वह पापी होता है।" और (२) " ऋषि, छन्द आदि किसी भी मन्त्रके जो बहि-रंग हैं उनके जाने विना मन्त्र नहीं कहना चाहिये। " इसलिये इसमें आये हुए संहिताभागके मन्त्रोंके ऋषि छन्द देवता विनियोग आदि भी

---

(१) अविदित्वा ऋषिं च्छन्दो दैवतं योगमेव च । योऽध्यापयेज्जपेद्वाऽपि पापीयाञ्जायते तु सः ॥ (स्मृतिवचन) (२) यो ह वा अविदितार्षेयच्छन्दोदैवत-ब्राह्मणेन मन्त्रेण याजयति वा स्थाणुं वार्च्छति गर्तं वा प्रतिपद्यते॥ (आर्षेयब्राह्मण)

दे दिये गये हैं। शास्त्रोंमें यह भी लिखा है कि, (१) विना अर्थ जाने केवल पाठमात्र जो पढा जाता है वह सब निष्फल है जैसे सूखी हुई लकडी अग्निके विना कदापि नहीं जलती है" इसलिये इसमें आये हुए मन्त्रोंके अर्थ भी दे दिये गये हैं। शास्त्रोंने यह भी आज्ञा की है कि (२) " संध्या, ध्यान, जप आदिमें सम्पूर्ण मन्त्रोंका प्रयोग स्वर आदि जानकर अच्छे प्रकार करना चाहिये अन्यथा वह सब निष्फल होजाते हैं" इसलिये प्रत्येक मन्त्रोंपर स्वर आदि भी लगा दिये गये हैं। अन्तमें हम इस प्रस्तावनाको यहींपर समाप्त करते हुए विद्वज्जनोंसे प्रार्थना करते हैं कि जो भूलें इसमें हो गयी हैं उनको क्षमा करते हुए सूचित करेंगे, ताके आग्रिमावृत्तिमें ठीक कर दी जावें। यदि इस पद्धतिसे किसीको कुछ भी लाभ पहुँचा तो हम अपने परिश्रमको सफल समझेंगे। इति शिवम् ॥

वल्लभगढ
श्रावण कृष्णा० २ संवत् १९८१ } सोहनलाल गोयलीय।

---

(१) यदधीतमविज्ञातं निगदेनैव शब्द्यते। अनग्नाविव शुष्कैधो न च ज्वलति कर्हिचित् ॥ (निरुक्त)

(२) स्वरतो वर्णतः सम्यक् संध्याध्यानजपादिषु । सर्वे मन्त्राः प्रयोक्तव्या हीनाः स्युरफल नृणाम् ॥ बृहत्पाराशरसंहिता ॥

ॐ तत्सत्

नित्यहवनपद्धति ।

भाषाटीकासमेत ।
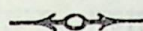
आवश्यक सूचना अध्याय ।

(१) ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यको ही हवन करनेका अधिकार है, शूद्रोंको नहीं ।

(२) जिस समय सूर्य अस्ताचल पर्वतसे छत्तीस अंगुल ऊपर हो उस समय सन्ध्याको और प्रातःकाल किरणोंके दीखने पर हवन करे ।

(३) स्नान, आचमन, सन्ध्या आदिके पश्चात् हवन करना चाहिये ।

---

(१) ब्राह्मणो वैव राजन्यो वा वैश्यो वा ते हि यज्ञियाः (शतपथ)
वध्यो राज्ञा स वै शूद्रो जपहोमपरश्च यः ।
ततो राष्ट्रस्य हन्ताऽसौ यथा वह्नेश्च वै जलम् ॥ (अत्रिस्मृति)॥

(२) सूर्येऽस्तशैलमप्राप्ते षट्त्रिंशद्भिः सदांगुलैः ।
प्रादुष्करणमग्नीनां प्रातरालोकदर्शनात् ॥ (कात्यायनस्मृति) ॥

(३) सुस्नातः सम्यगाचान्तः कृतसन्ध्यादिकक्रियः ।
कामक्रोधविहीनश्च पाखण्डस्पर्शवर्जितः ॥
जितेन्द्रियः सत्यवादी सर्वकर्मसु शस्यते ॥ (संस्कारभास्कर) ॥

(४) जितना कर्मांश विधानसे विरुद्ध अन्यथा हो गया हो उसको फिरसे कर लेवे। यदि प्रधानकर्म अन्यथा विधिसे विरुद्ध होगया हो तो सब अङ्गोंसहित फिरसे करे।

(५) ओंकारसहित पावन मन्त्रके अन्तमें स्वाहा पद् बोलकर मन्त्रदेवताका ध्यान करता हुआ त्यागवाक्यके अन्तमें आहुति छोडनी चाहिये।

(६) प्रज्वलित अग्निमें हवन करना चाहिये, अप्रज्वलितमें नहीं।

(७) हाथसे अन्न तिलादिकी आहुतिमें चारों अंगुलियोंके बारहों पर्व भरकर आहुति छोडे। रसादिकी आहुति स्त्रुवा वा स्त्रुक् भरकर छोडे।

---

(४) कर्मान्यथाकृतं ज्ञात्वा तावदेव पुनश्चरेत्।
प्रधानस्याक्रियायां तु सांगं तत्पुनराचरेत्॥ (संस्कारभास्कर)॥

(५) मन्त्रेणोङ्कारपूतेन स्वाहान्तेन विचक्षणः।
स्वाहावसाने जुहुयाद्ध्यायन्वै मन्त्रदेवताम्॥ (व्यासस्मृति)

(६) योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यङ्गारिणि च मानवः।
मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्चैव जायते॥ (संस्कारभास्कर)

(७) पाण्याहुतिर्द्वादशपर्वपूरिका रसादिना चेत्स्त्रुचि पर्वपूरिका।
(कात्यायनस्मृति)

(८) जहां कर्ताका हस्तादि अङ्ग नहीं कहा गया हो कि अमुक अंगसे यह करे वहां सर्वत्र दहिना अंग समझना चाहिये ।

(९) जहां होमादि कर्ममें दिशाका नियम न लिखा हो, वहां सर्वत्र पूर्व उत्तर और ईशान इनमेंसे किसी दिशामें मुख करके कर्म करे ।

(१०) जहां यह नहीं कहा हो कि खडा होकर बैठके वा झुककर कर्म करे वहां सर्वत्र बैठकर कर्म करना चाहिये ।

(११) होमादि कर्ममें विहित वस्तु प्राप्त नहीं होनेपर उसीके तुल्य अन्य पदार्थसे काम चला लेना चाहिये । जैसे जौके न मिलनेपर गेहूँ, व्रीहिके अभावमें शालिके चावल आदि ।

---

(८) कर्त्रङ्गानामनुक्ते तु दक्षिणाङ्गं भवेत्सदा ॥ (संस्कारभास्कर)

(९) यत्र दिङ्नियमो नास्ति जपादिषु कथंचन ।
तिस्रस्तत्र दिशः प्रोक्ता ऐन्द्री सौम्याऽपराजिता ॥
(संस्कारभास्कर)

(१०) आसीनः प्रह्व ऊर्ध्वो वा नियमो यत्र नेदृशः ।
तदासीनेन कर्तव्यं न प्रह्वेण न तिष्ठता ॥

(११) यथोक्तवस्त्वसंपत्तौ ग्राह्यं तदनुकारि यत् ।
यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालयः ॥

(१२) घृतसे कहे होमादिमें गोघृत जानो, उसके अभावमें महिषीका, उसके भी अभावमें बकरीका वा भेडका, उसके अभावमें तिलतैल, उसके अभावमें वन्य तिलोंका तैल, उसके अभावमें कुसुम्भका तैल, उसके भी अभावमें सरसोंके तेलसे हवन करे।

(१३) आहुतिप्रदानसे स्रुवामें बची हविको प्रोक्षणीमें डालता जाय और होमकी समाप्तिपर उसका भक्षण करे।

पात्रादिलक्षणकथन-अध्याय।

(१) ब्रह्मासन, चौबीस अंगुल लम्बा और चतुष्कोण बरनाका बनावे।

---

(१२) आज्यहोमेषु सर्वेषु गव्यमेव घृतं भवेत्।
तदभावे महिष्यास्तु आजमाविकमेव वा ॥
तदभावे तु तैलं स्यात्तदभावे तु जार्तिलम्।
तदभावे तु कौसुम्भं तदभावे तु सार्षपम् ॥ (संस्कारभास्कर)

(१३) पाकयज्ञाश्ववत्स्थाल्या। सर्वहोमं हुत्वा शेषप्राशनम्।
(कात्यायनसूत्र)

(१) षडङ्गुलप्रमाणन्तु षड्वर्तचतुरस्रकम्। तथा चोभयतः खातं वारणं तत्प्रचक्षते। यजमानासनं पत्न्या आसनं च पृथक् पृथक् ॥ होत्रासनं तथा ब्रह्मासनं विस्तारयोगतः ॥ (कात्यायनसूत्र)

(२) ब्रह्मा, पचास कुशोंको दहिना ऐंठकर वा गोलाकार बीडरूप करके अग्रभागमें गांठ लगाके बनावे ।

(३) प्रोक्षणीपात्र, एक हाथ लम्बा विकङ्कत वृक्षका हो जिसमें हंसके मुखसा जल छोडनेका बनाया जावे और जिसमें चार अंगुलका गहरा बिल (गढा) हो ।

(४) आज्यस्थाली, चांदी वा मट्टीकी बनावे जो विस्तारमें बारह अंगुलकी प्रादेशमात्र ऊंची हो ।

(५) प्रणीतापात्र, बरनेका बनावे। यह बारह अंगुलका हो, हथेलीके समान खुदा हुआ आकृतिमें कमलपत्रके समान हो ।

(६) स्रुवा, खैरका २४ अंगुल लम्बा आगेसे अंगूठेके पोरुवेके बराबर गहरा गोल गढेयुक्त बनावे ।

---

(२) पञ्चाशद्भिर्भवेद् ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः । दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्त्तस्तु विष्टरः ॥ वेण्या वा वर्त्तुलं कृत्वा वेण्यग्रे ग्रन्थिबन्धनम् ॥ (संस्कारभास्कर)

(३) वैकङ्कतं पाणिमात्रं प्रोक्षणीपात्रमुच्यते । हंसमुखप्रसेकं च वा बिलं चतुरंगुलम् ॥ (यज्ञपार्श्वसंग्रहकारिका)

(४) आज्यस्थाली तैजसी वा मृन्मयी वा प्रकीर्तिता ।
द्वादशांगुलविस्तीर्णा प्रादेशोच्चा शुभा स्मृता ॥

(५) प्रणीता वारणा ग्राह्या द्वादशांगुलसम्मिता ।
खातेन हस्ततलवदाकृत्या पद्मपत्रवत् ॥ (यज्ञपार्श्वग्रंथ)

(६) खादिरकाष्ठनिर्मितः अरत्निमात्रो दीर्घः अग्रभागे अंगुल-

(७) शमी (छियोकर), पलाश (ढांक), वट, प्लक्ष, (पाकर), विकङ्कत, पीपल, उदुम्बर (गूलर), बिल्व, चन्दन, सरल, देवदारु और खदिर इनमेंसे किसी एक वृक्षकी समिधा होममें लगावे ये सब यज्ञीय वृक्ष कहाते हैं।

(८) जो तीन समिधा मन्त्रद्वारा होमके लिये लिखी हैं वे अंगुल तुल्य मोटी त्वचा सहित कीटरहित विना फटी अन्य शाखा पत्ते जिनमें न लगे हों ऐसी प्रादेश मात्र यज्ञीय वृक्षकी होती हैं।

आहुतिआदिनिर्णय अध्याय।

नित्य हवनमें कौन २ कृत्य करने चाहियें ? तथा किन २ आहुतियोंका दिया जाना आवश्यक है ? इस जगह इस बातका शास्त्रप्रमाणानुसार निर्णय किया जाता है।

—पर्वमात्रवर्तुलबिलयुक्तः आज्यहोमादौ कारणभूतः स्रवत्याज्यादि द्रव्यमस्मादिति व्युत्पत्त्या स्रुवपदवाच्यः ॥ (श्रौत्रपदार्थनिर्वचन)

(७) शमीपलाशन्यग्रोधप्लक्षवैकंकतोद्भवाः।
अश्वत्थोदुम्बरौ बिल्वश्चन्दनः सरलस्तथा ।
शालश्च देवदारुश्च खादिरश्चेति याज्ञिकाः ॥ (संस्कारभास्कर)

(८) न वियुक्ता त्वचा चैव न सकीटा न पाटिता।
प्रादेशान्नाधिका नोना न तथा स्याद्विशाखिका ॥ (कात्यायनस्मृति)

मनुस्मृतिमें लिखा है कि (१) "काम, यज्ञ, व्रत, नियम, धर्म सब संकल्पसे ही होते हैं" इसलिये इसमें सर्व प्रथम संकल्प रखा गया है ॥

पारस्करगृह्यसूत्रमें लिखा है कि (२) "कुण्डसंस्कार, अग्निस्थापन, ब्रह्मोपवेशन, प्रणीताप्रणयन, अग्निपरिस्तरण, पात्रासादन, पवित्रकरण प्रोक्षण, आज्याधिश्रयण, स्रुवप्रतपन, समिदाधान, अग्निपर्युक्षण कर हवन करे यह ही विधि है जहां कोई हवन हो।" इसवास्ते यह सब कृत्य इसमें रखे गये हैं।

आगे चलकर इसी गृह्यसूत्रमें लिखा है कि (३) "आघार-संज्ञक, आज्यभागसंज्ञक, महाव्याहृतियोंसे सर्वप्रायश्चित्त-

---

(१) संकल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्पसम्भवाः ।
व्रतं नियमधर्मौ च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः ॥

(२) परिसमुह्योपलिप्योल्लिख्योद्धृत्याभ्युक्ष्याग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य प्रणीय परिस्तीर्यार्थवदासाद्य पवित्रे कृत्वा प्रोक्षणीः संस्कृत्यार्थवत्प्रोक्ष्य निरूप्याज्यमधिश्रित्य पर्यग्नि कुर्यात् । स्रुवं प्रतप्य सम्मृज्याभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य निदध्यात् । आज्यमुद्वास्योत्पूयावेक्ष्य प्रोक्षणीश्च पूर्ववदुपयमनान् कुशानादाय समिधोऽभ्याधाय पर्युक्ष्य जुहुयात् । एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः ॥

(३) आघारावाज्यभागौ महाव्याहृतयः सर्वप्रायश्चित्तम् प्राजापत्यꣳस्विष्टकृच्च । एतन्नित्यꣳसर्वत्र ॥

संज्ञक, प्रजापतिके नामसे और स्विष्टकृत् इन मन्त्रोंसे घृतकी आहुति प्रदान करे. यह सब होमकार्योंमें आवश्यक है " इस वास्ते यह सब आहुतियां इसमें रखी गयी हैं ।

मनुस्मृतिमें लिखा है कि, (४) " शकलहोमके ६ मंत्रोंसे एक वर्षतक भी प्रतिदिन घृतद्वारा हवन करे तो बडेसे बडा पाप भी छूट जाता है " इसलिये यह ६ आहुतियां भी इसमें रखी हैं ।

ऐतरेय ब्राह्मणमें लिखा है कि; (५) सूर्यमन्त्रसे प्रातः-काल और अग्निमन्त्रसे सायंकालमें आहुति देनी चाहिये । तथा शिवपुराण प्र० विद्येश्वरसंहिताके १४ अध्यायमें उल्लेख है कि, यह आहुतियां आयुके बढानेवाली हैं । इस लिये यह भी इसमें रख दी हैं ।

जिन होमोंमें कुशकण्डिकाकृत्य होता है उनमें उनका बर्हि-र्होम भी होता है (६) क्योंकि इसमें कुशकण्डिकाकृत्य भी किया जाता है इसवास्ते बर्हिर्होमाहुति भी इसमें रख दी है ।

---

(४) मन्त्रैः शाकलहोमीयैरब्दं हुत्वा घृतं द्विजः । सुदीर्घमपि हन्त्येनो जप्त्वा वा नम इत्यृचम् ॥ (५) अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सायं जुहोति । सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा इति प्रातः ॥

(६) बर्हिरमुत्र हरति (मानवगृह्यसूत्र ॥)

बर्हिर्हुत्वा ॥ (पारस्करगृह्यसूत्र)

शास्त्रोंमें लिखा है कि (७) " पूर्णाहुतिद्वारा समस्त फल प्राप्त हो जाता है। इसलिये इसमें पूर्णाहुति भी रखी है॥

कात्यायनस्मृतिमें लिखा है कि (८) " सब होमोंका अन्तमें वामदेव सामगायन तीन प्रकारसे करे " इसवास्ते इसके अन्तमें वामदेव्य गायन रखा गया है।

नित्यहवनविधिनिरूपण अध्याय।

पूर्वभाग।

(१) संकल्प।

ॐ तत्सत् अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्य्यावर्त्तैकदेशे पुण्यक्षेत्रे अमुकनामसंवत्सरे अमुकर्तौ महामाङ्गल्यप्रदे मासानां मासोत्तमे मासे अमुकमासे शुभे अमुक-

---

(७) पूर्णाहुत्या सर्वान्कामानवाप्नोति ॥

(८) अंते च वामदेव्यस्य गानं कुर्य्यादृचस्त्रिधा ॥

(१) संकीर्त्य मासपक्षादीन्निमित्तानि तथैव च।
इदं कर्म करिष्येऽहमिति संकल्पमाचरेत् ॥ (संस्कारभास्कर)

पक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे यथायोगकरणलग्नमुहूर्तवर्तमनस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु यथास्थान-स्थितेषु ग्रहेषु शुभपुण्यफलप्राप्तिकामः अमुकगोत्रः अमुकगुप्तोऽहं नित्यकर्म कर्तुकामोऽहं स्वपातकदुरितक्षयार्थं कायिकवाचिकमानसिकपापोपशमनाय प्रातःसायं होमं करिष्ये ॥

विधि–इसको पढकर संकल्प करे ।

(२) अग्निस्थापन ।

ॐभूर्भुवःस्वर्द्यौरिवभूम्नापृथिवीववरिम्णा ।
तस्यास्तेपृथिवि देवयजनिपृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–(१)भूरिति प्रजापतिर्ऋषिः। दैवी गायत्री छं० ।अग्निर्देवता अग्निस्थापने वि०।

---

(२) दारुभिर्ज्वलन्तमादधाति भूर्भुव इति (३ । ९) (कात्यायन कल्पसूत्र)

(२) भुव इति प्र० ऋ। दैव्युष्णिक्छन्दः। वायुर्देवता अग्निस्थापने वि०। (३) स्वरिति प्र० ऋ० । दैवीगायत्री छं०। सूर्यो देवता। अग्निस्थापने वि० । (४) द्यौरिवेति प्र० ऋ० । याजुषी गा० छं० । लिङ्गोक्ता देवता। अग्निस्थापने वि० ।

मन्त्रार्थ–इन आधान मन्त्रोंमें (भूः) यह प्रथम व्याहृति है (भुवः) यह दूसरी और (स्वः) यह तीसरी है यह तीन व्याहृति पृथ्वी आदि तीन लोकके नाम हैं इनको उच्चारण कर प्रजापतिने तीन लोकोंकी रचना की है। इस कारण इनको स्थापित करनेमें त्रिलोकीका स्मरण करे तो इन व्याहृतियोंकी महिमा होती है। अथवा भूर्भुवः स्वः इन तीन शब्दोंसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा आत्मप्रजा और पशुओंका ग्रहण है। यह सब मेरे वशीभूत हों ऐसी प्रार्थना कर अग्निमें आधान करे।

मन्त्रार्थ यह है–हे अग्नि! तुम भूर्लोक भुवर्लोक और स्वर्लोक सर्वत्र ही विद्यमान हो ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

हे देवताओंके यज्ञ करने योग्य पृथिवी ! उस तुम्हारी देव-यजन योग्य पृष्ठपर योग्य अन्नकी सिद्धिके निमित्त अथवा अन्नादिलाभ कामनाके निमित्त अन्नके खानेवाले गार्हपत्यादि-

रूप अग्निको स्थापन करता हूँ। तुम्हारी पृष्ठपर अग्निको स्थापन करके बहुतायतसे द्युलोकके समान हो जाऊं जैसे द्युलोक तारकादिसे पूर्ण है, इस प्रकार मैं पुत्र पशुआदिसे बहुत हो जाऊं। बहुतोंके आश्रयवाली पृथ्वीके समान हो जाऊं। जैसे पृथ्वी उरु होनेसे सब प्राणियोंको आश्रय देती है, इसी प्रकार मैं भी सब प्राणियोंको आश्रयरूप हो जाऊं। अथवा यह अग्निके विशेषण हैं कि महिमासे द्युलोकके समान अर्थात् जैसे ग्रह नक्षत्रसे द्युलोक व्याप्त है इसी प्रकार आग्नि अनेक ज्वालायुक्त है। वरिमामें पृथ्वीके समान जैसे सब प्राणियोंका आश्रयरूप है इसी प्रकार सब वस्तुओंका शोधक होनेसे अग्नि श्रेष्ठ है ॥४॥

विधि—यदि ताम्रकुण्ड न हो तो (❀) गोलाकार या चौकोण चौबीस अंगुल गर्भ चार अंगुल चौडा और बारह अंगुल ऊंची परिधि हो। ऐसे कुण्डको प्रथम कुशासे झारकर गोबर और जलसे पोतकर पश्चिम पूर्वको लम्बा क्रमशः उत्तर उत्तरको तीन रेखा करे। रेखाओंकी उभडी मिट्टीको अनामिका और अंगुष्ठसे उठाकर कुण्डसे बाहर फेंककर जलसे सींचकर इस मन्त्रसे कुण्डमें स्वाभिमुख अग्नि स्थापित करे।

(❀) प्रागुदक्प्लक्षणमुद्धृत्यावोक्ष्य स्थण्डिलं गोमयेनोपलिप्य मण्डलं चतुरस्रं वाऽग्निं निर्मथ्याभिमुखं प्रणयेत् ॥ (मानवगृह्यसूत्र)

(३) अग्निपरिस्तरण।

विधि—दक्षिण तरफ ब्रह्मासन बिछाकर तथा उसपर ब्रह्माजीको बिठाकर कुण्डके चारों तरफ कुशोंको बिछावे, कि जिसमें पूर्व और पश्चिमके कुशोंका मूल दक्षिण और सिरा उत्तरको हो। एवम् दक्षिण ओरके कुशोंका मूल पश्चिम और अग्र पूर्वको हो। अथवा सब कुशोंका मूल पश्चिम ओर और अग्र पूर्वको हो।

(४) समिदाधान।

ॐ समिधाऽग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन्हव्या जुहोतन स्वाहा॥ इदमग्नये न मम॥ १॥ यजु०॥

ऋष्यादि—समिधाऽग्निमित्यस्य आंगिरस ऋषिः। गायत्री छन्दः। अग्निर्देवता। समिदाधाने विनियोगः॥

---

(३) प्रागग्रैर्दर्भैरग्निं परिस्तृणाति॥ प्रागुदगग्रैर्वा॥

(आपस्तम्बीयगृह्यसूत्र)

(४) तिस्रः समिधो घृताक्ता आदधाति समिधाग्नि (३।१) मिति प्रत्यृचम्॥ (कात्यायनकल्पसूत्र॥)

मन्त्रार्थ–हे ऋत्विजो ! तुम समिधा करके अग्निकी परिचर्या करो। घृतोंके प्रदानसे आतिथ्यकर्मवाले पूजनीय अग्निको प्रज्वलित करो। इस प्रज्वलित अग्निमें अनेक प्रकारके हव्य पदार्थ सब प्रकारसे हवन करो ॥

ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे न मम ॥ २ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि-सुसमिद्धायेत्यस्य वसुश्रुत ऋषिः। गायत्री छं०। अग्निर्देवता। समिदाधाने विनियोगः ॥

मन्त्रार्थ–हे ऋत्विजो ! तुम अच्छे प्रकारसे दीप्तिमान् प्रज्वलित जातप्रज्ञ अर्थात् सब कुछ जाननेवाली अग्निदेवताके निमित्त अतिस्वादु वा अधिक शुद्ध घृतको प्रदान करो अर्थात् हवन करो ॥

ॐ तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा ॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे न मम ॥ ३ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि—तन्त्वेत्यस्य भरद्वाज ऋषिः । गायत्री छ० । अग्निर्देवता । समिदाधाने विनियोगः ॥

मंत्रार्थ—हे कम्पनस्वभाव अग्नि ! उक्तगुणयुक्त तुमको यज्ञ-सम्बन्धि काष्ठ और संस्कार किये घृतसे बढाते हैं । हे चिर-तरुण ! तुम सदा तरुण रहनेवाले हो बडे वा वृद्धिको प्राप्त होकर प्रदीप्त हो ॥

विधि—आवश्यक पदार्थोंको रखकर, पवित्र बनाकर प्रोक्ष-णीको प्रणीतोदक और पवित्रसे उत्पवन प्रोक्षण कर आवश्यक पदार्थोंको प्रोक्षण कर, घृतको घृतके पात्रमें रख, अग्निपर रख, चारों तरफ अग्नि करे, स्रुकको अच्छी तरह तपाकर सम्मार्जन कुशोंसे झाडकर, फिर तपाकर रख दे, घृतको उतार उत्पवन कर, भलीभांति देखकर और प्रोक्षणीको पूर्ववत् उत्पवन कर उपयमन संज्ञक कुशोंको वामहाथमें लेकर क्रमशः तीनों मंत्रोंसे तीन समिधा घृतमें डुबोकर खडा होकर अग्निमें चढावे ॥

(९) अग्निपर्युक्षण ।

ॐ अदितेऽनुमन्यस्व ॥ १ ॥

---

(९) अग्निं परिषिञ्चत्यदितेऽनुमन्यस्वेति दक्षिणतः प्राचीनमनु-मतेऽनुमन्यस्वेति पश्चादुदीचीनं सरस्वत्यनुमन्यस्वेत्युत्तरतः प्राचीनं देव सवितः प्रसुवेति समन्तम् ॥ (आपस्तम्बीय गृह्यसूत्र)

मन्त्रार्थ–हे अखण्डनीय परमात्मन् ! आप हमें अहिंसादि सम्पादनार्थ अनुकूल मति दीजिये ॥

ओ३म् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥ २ ॥

मन्त्रार्थ–हे अनुगत–व्यापक ज्ञानस्वरूप ! अनुकूल मति दीजिये ॥

ओ३म् सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥ ३ ॥

मन्त्रार्थ–हे प्रशस्त ज्ञानस्वरूप ! अनुकूल मति दीजिये ॥

ओ३म् देव॑ सवितः॒ प्रसु॑व य॒ज्ञं प्रसु॑व य॒ज्ञप॑तिं॒ भगा॑य । दि॒व्यो ग॑न्ध॒र्वः के॑त॒पूः केतं॑न्नः पुनातु॒वाचस्पति॒र्वाचं॑ नः स्वदतु ॥४॥ यजु०॥ ऋष्यादि–देवसवितरित्यस्य प्रजापतिः ऋ० । आर्षी त्रिष्टुप् छं० । सविता देवता । अग्नि-पर्युक्षणे विनियोगः ॥

मन्त्रार्थ–हे सबके प्रेरक देव ! यज्ञको प्रेरणा करो । यजमानको सौभाग्यके निमित्त प्रेरणा करो । स्वर्गमें स्थित दूसरेके चित्तमें वर्तमान ज्ञानका शोधन करनेवाला, वाणीका धारण करनेवाला सविता हमारे चित्तवर्ती ज्ञानको ब्रह्मज्ञानसे पवित्र

करे वाणीका पति सविता देव हमारी वाणीको मधुरता युक्त करें। हमारी वाणी उसे भली लगे ॥

विधि–पहले मन्त्रसे दक्षिणसे पूर्व और दूसरेसे पश्चिमसे उत्तर तथा तीसरेसे उत्तरसे पूर्व और चौथेसे अग्निके चारों ओर जल सेचन करे ॥

नित्यहवनविधिनिरूपण अध्याय।

उत्तरभाग।

(१) आघाराज्याहुति।

ॐप्रजापतयेस्वाहा॥इदं प्रजापतये न मम १(यजु०)

मन्त्रार्थ–प्रजापति देवके निमित्त आहुति हो।

ॐइन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय न मम॥२॥(यजु.)

मन्त्रार्थ–इन्द्रदेवताके निमित्त आहुति हो।

विधि–पहले मन्त्रको मनही मनमें बोलता हुआ अग्निकुण्डके उत्तरार्द्धमें पूर्वको झुकती हुई आहुति दे, दूसरे मन्त्रसे अग्निकुण्डके दक्षिणार्द्धमें पूर्वको झुकती आहुति दे।

---

(१) आघारौ जुहोति प्राजापत्यमुत्तरार्द्धे प्राञ्चं मनसा ऐन्द्रं दक्षिणार्द्धे प्राञ्चमेव ॥ (मानवगृह्यसूत्र ॥)

(२) आज्यभागाहुति ।

ॐ अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये न मम । १ । (यजु.)

मन्त्रार्थ–अग्निदेवके निमित्त आहुति हो ।

ॐ सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय न मम ।२। (यजु.)

मन्त्रार्थ–सोमदेवके निमित्त आहुति हो ॥

विधि–पहले मन्त्रसे कुण्डके उत्तरपूर्वार्ध ईशान कोणमें और इसी मन्त्रसे कुण्डके दक्षिणार्ध पूर्वार्ध नाम आग्नेयकोणमें दो आहुति दे ॥

(३) महाव्याहृत्याहुति ।

ॐ भूः स्वाहा ॥ इदमग्नये न मम ॥

मन्त्रार्थ–जिसमें सब जीव और पदार्थ होते हैं जिसका अवीची नाम नरकसे ऊपर सुमेरु पर्वतकी पीठ वा चोटी-तक प्रमाण है उस पृथ्वी लोकके लिये अथवा शङ्कराचार्यके मतानुसार "भूरितिसन्मात्रमुच्यते" इस व्युत्पत्तिसे सत् स्वरूप परमात्माके लिये आहुति हो ॥

---

(२) अथाज्यभागौ जुहोत्यग्नये स्वाहेत्युत्तरार्धपूर्वार्द्धे सोमाय स्वाहेति दक्षिणार्धपूर्वार्धे समं पूर्वेण ॥ आपस्तंबीयं गृह्यसूत्रम् ।

(३) व्यस्ताभिर्व्याहृतीभिश्च समस्ताभिस्ततः परम् ॥ (व्यासस्मृति॥)

ॐ भुवः स्वाहा ॥ इदं वायवे न मम ॥ २ ॥

मन्त्रार्थ–जहां पुनर्जन्म लेकर प्राणी भोग करें और जो सुमेरुकी चोटीसे ध्रुवतक है उस अन्तरिक्षलोकके निमित्त अथवा शङ्कराचार्यके मतानुसार "भुव इति सर्वं भावयति प्रकाशयतीति व्युत्पत्त्या चिद्रूपमुच्यते" इससे चित्स्वरूप परमात्माके निमित्त आहुति हो ॥

ॐ स्वः स्वाहा ॥ इदं सूर्याय न मम ॥ ३ ॥

मन्त्रार्थ–शीत उष्ण वृष्टि तेज जिसमें उत्पन्न होते हैं और जो अच्छी करनीवालोंका घर है तथा ध्रुवसे उत्तर जो स्वर्गलोक है उसके निमित्त अथवा शङ्कराचार्यके मतानुसार "सुव्रियते इति व्युत्पत्त्या स्वरिति सुष्ठु सर्वैर्व्रियमाणसुखस्वरूपमुच्यते" इससे आनन्दस्वरूप परमात्माके निमित्त आहुति हो।

ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा ॥ इदमग्निवायु-सूर्येभ्यो न मम ॥ ४ ॥

मन्त्रार्थ-(ऊपर जा चुका) विधि–इनसे घृतकी आहुति दे।

(४) षट्शाकलाहुति।

ॐ देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥ इदमग्नये न मम ॥ १ ॥ यजु० ॥

---

(४) षड्भिर्देवकृतस्येति मन्त्रविद्भिर्यथा समम् (व्यासस्मृति)॥

ऋष्यादि–देवकृतस्येति भरद्वाज ऋ० । आसुर्यनुष्टुप्छं० अग्निर्देवता । शकलाहुतिदाने वि० ॥

मन्त्रार्थ–हे शकल ! अग्निमें आहूयमान तुम देवताओंके नियम कियेहुए यजन अभाव लक्षणवाले पापके दूर करनेवाले हो ।

ॐ मनुष्यंकृतस्यैनसोवयजनमसि स्वाहा ॥

इदमग्नये न मम ॥ २ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–मनुष्यकृतस्येति भरद्वाज ऋ० ।आसुर्युष्णिकछं० । अग्निर्देवता । शकलाहुतिदाने वि० ॥

मन्त्रार्थ–हे काष्ठखण्ड ! तुम मनुष्योंसे किये हुए द्रोह निन्दा आदि पापके निवारण करनेवाले हो ।

ॐ पितृकृतस्यैनसोवयजनमसि स्वाहा ॥

इदमग्नये न मम ॥ ३ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–पितृकृतस्येति भरद्वाज ऋ० । आसुर्यनुष्टुप्छं० अग्निर्देवता । शकलाहुतिदाने वि० ।

मन्त्रार्थ–हे काष्ठखंड ! तुम पितरोंमें श्राद्ध आदि न करनेसे उत्पन्न पापके विनाश करनेवाले हो ॥

ॐ आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥
इदमग्नये न मम ॥ ४ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–आत्मकृतस्येति भरद्वाज ऋ० । आसुर्यनुष्टुप्छं० । अग्निर्देवता । शकलाहुतिदाने वि० ।

मन्त्रार्थ–हे काष्ठखण्ड ! तुम अपनी आत्मामें किये निन्दादि पापके नाशक हो ॥

ॐ एनस एनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥ ५ ॥
इदमग्नये न मम ॥ ५ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–एनस इत्यस्य भरद्वाज ऋ० । आसुरी बृहती छं० । अग्निर्देवता । शकलाहुतिदाने वि० ।

मन्त्रार्थ–हे काष्ठखण्ड ! तुम सम्पूर्ण संसर्गसे उत्पन्न पापोंके नाशक हो ॥

ॐ यच्चाहमेनो विद्वाँश्चकार यच्चाविद्वांस्तस्य सर्वस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा ॥
इदमग्नये न मम ॥ ६ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–यच्चाहमित्यस्य भरद्वाज ऋ० । आर्ची बृहती च्छन्दः । अग्निर्देवता । शकलाहुतिदाने वि० ॥

मन्त्रार्थ–हे हूयमान काष्ठखण्ड ! जान बूझकर जो पाप मैंने किया है और विना जाने जो पाप किया है उस सम्पूर्ण पापके नाश करनेवाले हो हमारे सब पाप विनष्ट करो ॥

विधि–इन छः मंत्रोंसेभी घृतकी छः आहुति दे ॥

(५) प्रातःकालाहुति ।

ओ३म् सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥

इदं सूर्याय न मम ॥ १ ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–सूर्यो ज्योति० इति तक्षा ऋ०। एकपदा ।गायत्रीछ०।सूर्यो देवता।प्रातःकालाहुतिदाने वि०॥

मंत्रार्थ–यह जो सूर्य देवता है वही ब्रह्मज्योति है जो यह ज्योति है वही सूर्य है उनके निमित्त हवि दिया ॥

विधि–इससे प्रातःकाल एक घृतकी आहुति दे ।

(६) सायंकालाहुति ।

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥

इदमग्नये न मम ॥ १ ॥

(५) सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा इति प्रातः ॥

(ऐतरेयब्राह्मण) ॥

(६) अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सायं जुहोति ॥ (ऐ. ब्रा.)

ऋष्यादि–अग्निर्ज्योति० । इति तक्षाऋ० । एकपदा गायत्री छं० । अग्निर्देवता सायंकालाहुतिदाने वि० ॥

मंत्रार्थ–जो यह अग्नि देवता है वही दृश्यमान ज्योतिस्वरूप वा ब्रह्मज्योति है और जो यह दृश्यमान ज्योति वा ब्रह्मज्योति है वोही अग्निदेवता है, ज्योतिरूप अग्निके निमित्त हविप्रदान की ॥

(७) सर्वप्रायश्चित्ताहुति ।

ॐ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो-अव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांꣳसि प्रमुमुग्ध्युस्मत्स्वाहा ॥ १ ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥

(यजु०)

---

(७) सर्वप्रायश्चित्तसंज्ञकाः पंचाहुतयः । यथा त्वन्नो अग्ने० प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा सत्वन्नो अग्ने० सुहवो न एधि स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां द्वाभ्यां त्यागः । अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमया असि । अयानो यज्ञं वहास्ययानो धेहि भेषजꣳ स्वाहा । इदमग्नये । ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महांतः ।--

ऋष्यादि–त्वन्न इत्यस्य वामदेव ऋ० । त्रिष्टुप्छंदः । अग्नीवरुणौ देवते । सर्वप्रायश्चित्ताहुतिदाने विनियोगः ।

मन्त्रार्थ–हे अग्निदेवता ! सब कुछ जाननेवाली यज्ञमें प्रधान आतिशय हवि वहन करनेवाले कान्तिमान् तुम हमसे वरुणदेवताके क्रोधको दूर करो और सम्पूर्ण द्वेष दुर्भाग्य हमसे छुटा कर दूर करो ॥

विधि–इससे एक आहुति घृतकी दे ।

ॐ सत्वन्नो॑ अग्नेऽवमो भ॑वोती नेदि॑ष्ठोऽअस्या उ॒षसो॒ व्यु॑ष्टौ । अव॑ यक्ष्व नो॒ वरु॑णꣳ ररा॑णो वी॒हि मृ॑डीकꣳ सु॒हवो॑ न एधि स्वाहा॑ ॥ २ ॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥ (यजु०)

ऋष्यादि–सत्वन्न इति वामदेव ऋषिः । त्रिष्टुप्छंदः। अग्निर्देवता । सर्वप्रायश्चित्ताहुतिदाने वि० ।

–तेमिनों अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुंचंतु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः । उदुत्तममित्यादि अदितये स्याम स्वाहेत्यंतम् इदं वरुणाय ॥ (हरिहरभाष्य०पा० गृह्यसू० ॥

मन्त्रार्थ–हे अग्ने ! यह तुम इस उषःकालकी समृद्धिमें अपनी पालन शक्तिके सहित हमारी रक्षा करनेकी हमारे समीप हूजिये हवि देते हुए हमारे वरुण देवताको तृप्त कीजिये सुखकारक हविको भक्षण कीजिये। हमारे अच्छे आह्वानवाले हूजिये॥

विधि–इससे भी घृतकी एक आहुति दे।

ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्वमित्वमयाऽअसि। अयानो यज्ञं वहास्ययानो धेहि भेषजꣳ स्वाहा ॥ ३ ॥

ऋष्यादि इसके नहीं दिये हैं। क्योंकी यह पाराशर आदि संमत शाखान्तरीय मन्त्र है ॥

मन्त्रार्थ–हे अग्निदेव ! तुम बाहर और भीतर सर्वत्र स्थित हो और जिनके दोष न रहे ऐसे प्रायश्चित्त योग्य पुरुषोंके पालक हो और तुम कल्याणकारक हो यह बात सच्ची ही है हे अग्ने ! तुम-हमारे आश्रय होकर यज्ञके साधन आदिको देवताओंके निमित्त ले जाते हो इसलिये हमारे वास्ते दुःखनाशरूप सुखको देओ।

विधि–इससे भी एक आहुति घृतकी दे।

ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नोऽअद्य सवितोत

विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ॥
॥ ४ ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो
देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥

ऋष्यादि–इसके नहीं दिये हैं । क्योंकि यह पाराशर आदि संमत शाखान्तरीय मन्त्र है ।

मन्त्रार्थ–हे वरुणदेव ! जो वे सैकडों जो हजारों यज्ञसंबन्धी बडे प्रतिबन्धक पाश फैले हुए हैं उनसे हमको आज सवितादेव तथा विष्णु और सब मरुत महासूर्य आदि देवगण छुडावें ॥

विधि–इससेभी एक घृतकी आहुति दे ।

ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमꣳ श्रथाय । अथा वयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा ॥ ५ ॥
इदं वरुणाय न मम ॥ ऋक् ॥

ऋष्यादि–उदुत्तममिति आजीगर्त्तः शुनःशेपः ऋ० । त्रिष्टुप्छन्दः । वरुणो देवता । सर्वप्रायश्चित्ताहुतिदाने विनियोगः ।

मन्त्रार्थ–हे वरुण ! उत्तम शिरमें बंधे हुए पाशको हमारे लिये ऊपरको ढीला करिये । निकृष्ट अर्थात् पैरोंमेंके पाशको

नीचेको ढीला करिये (नाभिदेशके मध्यम पाश विमुक्त कहिये अलग करके ढीला करिये) इसके अनन्तर हे आदितिके पुत्र वरुण ! हम शुनःशेप तुम्हारे कर्ममें दुःख वा खण्डनसे रहित होनेके लिये अपराधरहित हों ॥

विधि–इससे भी घृतकी एक आहुति दे ।

(८) प्राजापत्याहुति ।

ॐ प्रजापतेनत्वदेतान्न्युन्यो विश्वा रूपाणि परिताबंभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयंᳲ स्यांम पतयोरयीणाम् स्वाहा ॥ १ ॥

इदं प्रजापतये न मम ॥ (यजु०)

ऋष्यादि–प्रजापत इत्यस्य देववात ऋषिः । निच्यृदार्षीत्रिष्टुप्छंदः । प्रजापतिर्देवता । प्रजापत्याहुतिहोमे विनियोगः ।

मन्त्रार्थ–हे प्रजापते ! प्रजागणके पालनादि कार्यमें तुमसे अधिक निपुण कोई नहीं, कोई कभी नहीं हो सकता इस कारण तुम ही एकमात्र हमारी प्रार्थनापूर्तिमें समर्थ हो इस कारण

---

(८) प्राजापत्यां व्याहृतीर्विहिताः सौविष्टकृती–मित्युपजुहोति ॥ (आपस्तंबीयगृह्यसूत्रम् ॥)

हे देव ! हम जिस कामनासे हवन करें वह सफल हो आपकी कृपासे हम अपरिमित ऐश्वर्यके स्वामी हों ॥

विधि—इससे घृतकी एक आहुति दे ।

(९) स्विष्टकृदाहुति ।

ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्वान् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ॥ १ ॥ इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥

(शतपथब्राह्मण)

मन्त्रार्थ—जो इस कर्मके विषयमें मैंने अधिक किया अथवा यहां थोडा किया गया, सब इन वस्तुओंको जाननेवाला और अच्छे इष्ट पदार्थोंका करनेवाला अग्नि उस सबको मेरे लिये अच्छे प्रकार दत्त करे । और शोभन यज्ञ संवाहक सुहुतको ग्रहण करनेवाले इष्यमाण सर्वथा प्रायश्चित्तकी आहुतियोंको

---

(९) यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्वान्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु स्वाहोति ॥

(आपस्तंबीयगृह्यसूत्रम् ।)

बढानेवाले अग्निके लिये सुहुत हो। हे भगवन्! हमारे सब अभिलषित पदार्थोंको बढाओ॥

विधि—इससे घृतकी एक आहुति दे।

(१०) बर्हिर्होमाहुति।

ॐ सम्बर्हिरङ्क्ताᳬहविषा घृतेन समादित्यैर्व्वसुभिः सम्मरुद्भिः। समिन्द्रो विश्वदेवेभिरङ्क्तान्दिव्यन्नभो गच्छतु यत्स्वाहा॥१॥ इदन्दिव्याय नभसे न मम॥ यजु०॥

ऋष्यादि—सम्बर्हिरिति प्रजापतिर्ऋ० विराड्रूपा त्रिष्टुप्छं०। बर्हिर्देवता। बर्हिर्होमाहुतिदाने वि०॥

मन्त्रार्थ—परमैश्वर्यवान् इन्द्र कुशाओंको हविसंस्कारयुक्त घृतसे भले प्रकार लिप्त करो और केवल इन्द्र ही नहीं किन्तु बारह आदित्योंके साथ आठ वसुओंके साथ उनंचास पवन देवताओंके साथ विश्वनामक देवगणोंके साथ लिप्त करो वह बर्हि जो दिव्यप्रकाशात्मक आदित्यलक्षणवाली ज्योति है वहांको प्राप्त यह बर्हि देवताके उद्देशसे दिया॥

---

(१०) बर्हिः सम्बर्हिरिति॥ (कात्यायनसूत्र)॥

विधि–कुण्डके सब ओर रखे कुशोंको इकट्ठे कर घृत लगाके उनको इस मन्त्रसे होम करदे ।

(११) पूर्णाहुति ।

पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरा पत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जꣳ शतक्रतो स्वाहा ॥ १ ॥ इदमिन्द्राय न मम ॥ यजु० ॥

ऋष्यादि–पूर्णादर्वीति और्णवाम ऋ० । अनुष्टुप्छं० । इन्द्रो देवता । पूर्णाहुतिदाने वि० ।

मन्त्रार्थ–अन्नप्रदानसाधन काष्ठादिनिर्मित पात्र ! तुम पूर्ण स्थालीके निकटसे अन्नको ग्रहण कर और पूर्ण होकर पूर्णतासे उत्कृष्ट हो इंद्रके प्रति गमन करो कर्मफलसे सम्यक् पूर्ण होकर फिर हमारे निकट आओ । हे बहुकर्मा इन्द्र ! हमारे और तुम्हारे मध्यमें पण्यव्यवहार प्रवृत्त हो अर्थात् मूल्यके समान अभीष्ट हविरूप अन्न हविर्दानस्वरूप रस विशेष परस्पर बेचें अर्थात् मैं तुमको हविर्दान करता हूँ, तुम मुझे बल और पुण्य दो ॥

विधि--बचे हुए सब घृतको स्रुवामें पूरा पूरा खडा होकर इस मन्त्रसे त्यागवाक्यकी समाप्तिके साथ पूर्णाहुति दे ।

---

(११) ॐ पूर्णादर्वि० ॥ इति पूर्णाहुति । (वासिष्ठहवनपद्धति) ॥

(१२) वामदेव्यगान ।

ओं भूर्भुवःस्वः । कयानश्चित्र आ भुवदूतीसदावृधः सखा । कयाशचिष्ठया वृता ॥ १ ॥ साम० ऋष्यादि-वामदेव ऋ० । गायत्री छं० । इन्द्रो देवता । वामदेव्यगायने वि० ।

मन्त्रार्थ-सदा बढता हुआ विचित्र पाराक्रमी मित्ररूप इन्द्र किस तृप्तिकारक पदार्थसे प्रज्ञासहित अनुष्ठान किये हुए किस कर्मसे हमारे अभिमुख होय ॥

ओं भूर्भुवस्वः । कास्त्वासत्योमदानांमा ंहिष्ठो मात्सदन्धसः । दृढा चिदारुजे वसु ॥ २ ॥ साम० ऋष्यादि-उपरोक्त । (साम०)

मन्त्रार्थ--पूजनीय सत्य आनन्ददायक पदार्थोंमें कौन परम आनन्ददायक है सोमका रस दृढभी शत्रुके धनको सब ओरसे नष्ट करनेको तुम्हें मदद दे ॥

---

(१२) अपहृते कर्मणि वामदेव्यगानम् शान्त्यर्थं शान्त्यर्थम् ॥

(गोभि० गृ० सूत्र) ॥

ॐ भूर्भुवस्वः । अभी षूणः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतं भवास्यूतये ॥ ३ ॥

सामवेद ।

ऋष्यादि–उपरोक्त ।

मन्त्रार्थ–मित्ररूप स्तोताओंके रक्षक तुम इन सैकड़ों रक्षाओंके अर्थ श्रेष्ठ प्रकारसे अभिमुख हूजिये ॥

महावामदेव्यम् । का४ऽ३ या ५ । न ५ श्चा ४ऽ३ इ ३ त्रा २३ अ ४ भु ४ वा ५ त् ५ । ऊ । ती स २ । दावृध २ । स्सा । खा । औ२३ हो ३ हा२ इ २ । कया ऽ२३ श ३ चा यि ष्ठ ३ यौ ३ हो २३ । हुम्मा ४ वाऽ२३ तौं २३४ऽ५ हा ५ यि २ ॥ १ ॥

का ३ऽ५ स्त्वा ५ । स त्यो ४ऽ५ मा २३दा ४ ना ५ मू ५ । म ५ हिष्ठो २ । मात्सादं २ धा । सा । अ २३ हो ३ हा २ यि २ । दृढा २३

चि ३ दा २ ७ । रु ३ जौ ३ हो २३ । हुम्मा ४ २ ७
वा ऽ२३ । सो २३४५ऽ६ हा २ यि २ ॥ २ ॥

आ ३ऽ६ भी ६ । षु ६ ण ४ऽ३स्सा २३
खी ४ ना ६ मू ६ । आ । विता २ जरायित्रे २ ।
णाम् । अऽ२३ हो ३ हा २ यि २ । शताऽ२३
म्भ ३ वा २ ७ सि ३ यौ ३ हो २३ । हुम्मा ४ २ ७ ।
ताऽ२३ । यो २३४५ऽ६ हा २ यि २ ॥ ३ ॥

विधि–पूर्णाहुतिके बाद इस वामदेव्यगानको करे । इति ।

विशेष–यदि किसीका विचार हो कि मैं प्रतिदिन वा कभी २ इससे अधिक हवन करूं तो उसको चाहिये कि घृत वा शाकल्यसे बर्हिहोंमसे पहले (ॐ तत्सवितु०) गायत्री मन्त्रसे जितना चाहे उतना हवन करे । त्याग ' इदं सवित्रे न मम ' ऐसा बोलना चाहिये, (१) गायत्रीसे किया हवन सब कामनाओंका देनेवाला होता है । गायत्री और उसका अर्थ नीचे दिया जाता है ॥

---

(१) हुता देवी विशेषेण सर्वकामप्रदायिनी । शंखस्मृति ॥

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ (यजु०)

ऋष्यादि–तत्सावितुरिति विश्वामित्र ऋ० । निच्यृद्गायत्री छन्दः० । सविता देवता । आहुतिदाने विनियोगः ।

मन्त्रार्थ–उस प्रकाशात्मक प्रेरक अन्तर्यामी विज्ञानानन्द स्वभाव हिरण्यगर्भोपाध्यवच्छिन्न आदित्यके अन्तर स्थित पुरुष वा ब्रह्मके सबसे प्रार्थना किये हुये सम्पूर्ण पापके वा संसारके आवागमन दूर करनेमें समर्थ सत्य ज्ञान आनंदादि तेजको हम ध्यान करते हैं जो सविता देव हमारी बुद्धियोंको सत्कर्मके अनुष्ठानके लिये प्रेरणा करता है ॥

इति नित्यहवनपद्धति समाप्त ।

पुस्तकें मिलने के स्थान :–

१. खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम् प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
सातवीं खेतवाड़ी
बम्बई–४०० ००४

२. गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम् प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्या बाई चौक, कल्याण,
(जि० ठाणे–महाराष्ट्र)

३. खेमराज श्रीकृष्णदास, चौक–वाराणसी (उ. प्र.)